People's Samachar 9/7/2011

रोजगार, अतिक्रमण और सरकार

डॉ. एम. एन. बुच

भारत में 85 प्रतिशत से अधिक रोजगार अनौपचारिक व असंगठित क्षेत्र द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। भारत में जीडीपी की वृद्धि की दर लगभग 8.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष है जबकि रोजगार के अवसरों की वृद्धि दर केवल 0.3 प्रतिशत प्रतिवर्ष है। अर्थात, राष्ट्रीय आय में जो वृद्धि हो रही है उसका लाभ रोजगार के माध्यम से गरीबों को नहीं मिल रहा है। ऐसी स्थिति में अधिकांश लोगों को रोजगार स्व-रोजगार के रूप में मिलता है और वह भी आर्थिक श्रृंखला की सबसे निचली कड़ी में। दिहाड़ी मजदूरी, सब्जी या फल फरोशी, हाथ ठेले से सामान ढोना, छोटी-मोटी चाय की दुकान लगाना इत्यादि व्यवसायों के माध्यम से हमारे अधिकांश शहरी गरीब थोड़ा-बहुत कमाते हैं। जिस दिन मजदूरी नहीं मिली उस दिन दिहाड़ी मजदूर भूखा सोता है। बाकी जो छोटे व्यवसायी हैं, जिनके पास कोई स्थाई स्थान नहीं है वे हाथ ठेलों पर उन स्थानों पर बिक्री करने का प्रयत्न करते हैं जहां लोग बाजार इत्यादि करने के लिए इकट्ठे होते हैं। यही वे व्यवसायी हैं जिन्हें नगर निगम से लेकर जिला प्रशासन इत्यादि भगाते रहते हैं, उनका माल और ठेला जप्त करते हैं और उन्हें परेशान करते हैं। श्रीमती इला भट्ट ने सेवा नामक संस्था के माध्यम से अहमदाबाद में जो मुहिम छेड़ी थी उसका लक्ष्य यही था कि इस प्रकार से कमाई करने वालों को तब तक न हटाया जाए जब तक उनका कोई स्थायी प्रबंध न हो। वे इसलिए सफल हुईं क्योंकि उन्होंने एक मजबूत संगठन बनाया। वैसे भी वे गुजरात में काम करती थीं जहां आज भी परमार्थ और समाज सेवा की परंपरा है। मध्यप्रदेश में यह परंपरा कदाचित नहीं है।

मैं इस पक्ष में नहीं हूं कि सड़क पर बिक्री करने वालों को यातायात या आवागमन में बाधा उत्पन्न करने दी जाए परंतु यह भी सत्य है कि ऐसे लोग सड़क किनारे खड़े होकर वहां धंधा करते हैं जहां इसका अवसर हो। उदाहरणार्थ, बिट्टन बाजार के आसपास की सड़कों पर ये लोग खड़े होते हैं। इन पर ही नगर निगम छापे मारता है। बड़ी दुकानें अतिक्रमण करके जगह घेरती हैं, उन्हें कोई हाथ नहीं लगाता। धनाढय लोग अपने वाहन कहीं भी खड़े करते हैं, उन्हें कोई हाथ नहीं लगाता परंतु अनीस नामक फल वाले को बार-बार उस जगह से भगाया जाता है जो बिट्टन बाजार के बाहर की सड़क पर है क्योंकि हम ऐसे स्थान पर छोटी बिक्री करने वालों का नजारा नहीं देखना चाहते। बिट्टन बाजार हाट के लिए बना था, अर्थात गरीब व्यवसायियों के लिए। वहां तो बड़े-बड़े आढ़तियों ने कब्जा कर लिया है, परंतु नगर निगम ने वहां बने फड़ों पर आज तक सुनियोजित ढंग से छोटे व्यवसायियों को जगह उपलब्ध नहीं कराई जिससे एक सही तहबाजारी निर्धारित हो और लोगों को सड़क पर खड़े होकर सामान बेचने की आवश्यकता ही न रहे।

मैं गर्व से कह सकता हूं कि भोपाल शहर की आधुनिक रूपरेखा और चेहरा मैंने बनाया था जिसमें न्यू मार्केट में वहां खड़े होने वाले ठेले वालों के लिए दुकानें बनाई गईं और आवंटित की गईं। स्थाई स्थान मिलने के बाद अब वे समृद्ध हो गए हैं, भले ही उनका धंधा बदल गया हो। वह ममता, वह संवेदनशील दिल कहां गया जिसने नगर निगम को जनोन्मुख बनाया था? इतवारा का जो चैराहा है, जहां भोपाल शहर के अंदर की लगभग पहली पानी की टंकी बनाई गई थी, वहां ठेलों पर लोग फल और सब्जी बेचते थे। सन् 1971-72 में उनके लिए एक सुनियोजित स्थान बनाया गया जहां छोटी-छोटी दुकानें दी गईं थीं। नगर निगम ने उन दुकानों को तोड़ दिया और इन लोगों को यादगार-ए-शाहजानी के पीछे पातरा नाले के किनारे बसने को कहा है। इतवारा तो बाजार है, जहां बड़ी संख्या में लोग आते हैं। पातरा के किनारे कौन जाएगा? यातायात सुधार के नाम पर नगर निगम ने इन लोगों से उनका रोजगार छीन लिया है और भूखा मरने को मजबूर कर दिया है। यहां पर ऐसे अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं जिनमें बजाए शहर की तरक्की में हिस्सेदारी मिलने के लोगों की रोजी-रोटी छीन ली गई।

> गरीब तो क्या अमीर भी कहां धंधा करता है? इसका जवाब तो यही है कि उस स्थान पर जहां उसे ग्राहक मिलें। ठेले वाला भी यही ढूंढता है ....।

गरीब तो क्या अमीर भी कहां धंधा करता है? इसका जवाब तो यही है कि उस स्थान पर जहां उसे ग्राहक मिलें। ठेले वाला भी यही ढूंढता है क्योंकि जहां ग्राहक नहीं हैं वहां बिक्री नहीं हो सकती। मैं समझता हूं कि किसी भी जनोन्मुख शासन का कर्तव्य है कि वह लोगों को रोजगार दे न कि उसे छीन ले। नगर की तरक्की इस पैमाने पर नापी जाती है कि वहां आलीशान इमारतें कितनी हैं, सड़कें कितनी चौड़ी हैं, बाग-बगीचे कितने हैं। क्या एक और पैमाना नहीं रखा जा सकता कि नगर के विकास को इस बात से नापें कि वहां साधारण व्यक्ति को रोजगार का अवसर कितना है? अर्थात, जब नगर विकास होता है तो इन गरीब व्यवसायियों के लिए भी नगर में स्थान उपलब्ध कराया जाना चाहिए और वह भी ऐसी जगह पर जहां वे कुछ कमा सकें। डीबी मॉल के लिए अरेरा पहाड़ी के नीचे शासन ने स्थान उपलब्ध कराया और वह भी वहां से झुग्गियां हटाकर। इन झुग्गी वालों को अपना धंधा करने के लिए स्थान क्यों उपलब्ध नहीं कराया गया? क्या गरीब को 'संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य' में जीने का अधिकार नहीं है? क्या उसे 'सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय' की पात्रता नहीं है? वैसे भी हम यदि उस व्यक्ति के लिए वैधानिक रूप से जीविका कमाने का रास्ता बंद कर देंगे तो वह अवश्य ही अपराध के रास्ते पर चलेगा, क्योंकि उसे जिन्दा तो रहना ही है। एक विचार पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूं। क्या वह प्रशासन, उन अपराधों में लिप्त नहीं है जिन्हें करने के लिए वह गरीबों को भगाकर, उनका रोजगार छीनकर उन्हें बाध्य करता है?

(लेखक पूर्व प्रशासकीय अधिकारी एवं शहरी विकास के विशेषज्ञ हैं)